षष्ठ अध्याय

"विवेच्य उपन्यासों का भाषिक, उद्देश्यगत एवं समस्यागत अनुशीलन"

षष्ठ अध्याय

"विवेच्य उपन्यासों का भाषिक, उद्देश्यगत एवं समस्यागत अनुशीलन"

विषय प्रवेश :

'जयप्रकाश कर्दम' गहन मानवीय संवेदना के सशक्त सृजनकार हैं। उनकी रचनाओं का मूल विषय दलित समाज है। उन्होंने अपनी मन की बात, विचार, हृदय की भावनाओं को सामान्य जन की भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त किया हैं। 'भाषा' भावाभिव्यक्ति तथा संप्रेषण का शक्तिशाली एवं सशक्त माध्यम है। 'भाषा' का संबंध मानवीय अस्तित्व से है, भाषा के बिना मनुष्य अपने अस्तित्व को व्यक्त नहीं कर सकता। अत: 'भाषा' रचनाकार के विचारों की वाहक होती है। 'जयप्रकाश कर्दम' के उपन्यासों की भाषा पात्र स्थिति काल कथ्यविषय एवं भावों के अनुरुप है। उनकी सरल, सहज तथा उद्देश्यगत भाषा के प्रयोग से विवेच्य रचनाओं का कथ्य मौलिक, सरस तथा कलात्मक परिलक्षित होता है। उनकी रचनाओं की भाषा का स्वरूप 'नकार', 'विरोध', विद्रोह प्रतिरोध को व्यक्त करते हुए तेज बहाव की तरह बना है। यह भाषा सामाजिक परिवर्तन की छटपटाहट, दु:खद परिस्थितियों पर आक्रोश व्यक्त करनें में सक्षम दिखाई देती है। अत: 'जयप्रकाश कर्दम' के विवेच्य उपन्यासों में भाषा, उद्देश्य एवं समस्याओं का विस्तृत विवेचन यहाँ प्रस्तुत हैं -

6.1 भाषा : स्वरूप एवं महत्त्व :

'भाषा' शब्द संस्कृत की 'भाष्' धातु से बना है जिसका अर्थ है - 'बोलना' या 'कहना'। अत: भाषा वक्ता के विचार को श्रोता तक पहुँचाती है अर्थात वह विचार-विनिमय का साधन होती है। हिंदी का 'भाषा' शब्द अंग्रेजी में 'लैंग्विज' फारसी में 'जबान' अरबी में 'लिस्सान' रुसी में 'यजिक' जर्मन में 'स्प्राखे' इन नामों से

उल्लेखनीय है किन्तु सृष्टि में इसका अर्थ एक ही है। डॉ.भोलानाथ तिवारी भाषा की अधिक व्यवस्थित और सर्वसमावेशी परिभाषा करते हुए लिखते है - "भाषा मानव-उच्चारणावयवों से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह संरचनात्मक व्यवस्था है, जिसके द्वारा समाज विशेष के लोग आपस में विचार-विनिमय करते हैं। लेखक, कवि या वक्ता अपनें अनुभवों एवं भावों आदि को व्यक्त करते हैं तथा अपने वैयक्तिक और सामाजिक, व्यक्तित्व, विशिष्टता तथा अस्मिता 'identity' के संबंध में जाने अनजाने जानकारी देते हैं।"[1]

अत: भाषा भावाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम होने से किसी भी साहित्यिक रचनाओं में भाषा का आकर्षण, प्रभावी, अर्थ, सक्षम तथा निश्चित उद्देश्य की पूर्तता महत्त्वपूर्ण पहलु हैं। रचनाकार अपनी अनुभूतियों की सकारात्मक सोच को रचनात्मक अंजाम देता है। जिससे रचित कृति के भाषा में जीवित रूप दृष्टिगोचर होता है। भाषा को सौंदर्यवती बनाने के लिए भाषा विषय के अनुकूल, प्रभावी, सरस, मुहावरों-कहावतों और सूक्तियों से युक्त पात्रानुकूल हो साथ ही 'शब्द योजना' से भी परिपूर्ण हो। अत: भाषा के नियोजन के बारे में श्यामसुंदरदास लिखते है - "भाषा ऐसे सार्थक शब्द-समूहों का नाम है, जो एक विशेष क्रम से व्यवस्थित होकर हमारे मन की बात दूसरे के मन तक पहुँचाने और उसके द्वारा उसे प्रभावित करने में समर्थ होती है।"[2]

उक्त कथन इस बात का संकेत देते है कि सार्थक तथा सशक्त अभिव्यक्ति के लिए भाषा जीवन के विविध आयामों को स्पष्ट करने के लिए 'मेरुदण्ड की भाँति कार्यरत रहती हैं। अत: भाषा से अभिप्राय है कथ्य का शब्द रुपी शरीर। मनुष्य के भावों एवं विचारों को प्रकट करने का सर्वोत्तम माध्यम 'भाषा' है। भाषा का महत्त्व स्पष्ट करते हुए 'जगमोहन टण्डन जी लिखते है कि - "भाषा मनुष्य के लिए संपत्ति के समान है। समाज और भाषा का उतना गहरा अटूट संवंध है कि एक के विना

दूसरे का अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है।"[3]

अर्थात भाषा तथा साहित्य का रिश्ता इसी तरह अटट है। भाषा के माध्यम से साहित्य का जन्म होता है। साहित्य मूलत: भाषा के माध्यम से जीवन की अभिव्यक्ति है। भाषा का साहित्य में स्थान सर्वोपरी है। मुन्शी प्रेमचंद भाषा में जनसाधारण की भाषा को महत्त्व देकर उसके प्रभाव पर जोर देते हुए कहते है कि - "किसी भाषा का मुख्य गुण उसकी सरलता नहीं, बल्कि उसका मुख्य गुण में अभिव्यक्ति करने की शक्ति हैं।"[4]

अत: उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भाषा तथा मनुष्य का जन्मत: अटट रिश्ता है। भाषा मानवी जीवन में अमूल्य देन हैं। उसका स्वरूप तथा महत्त्व वैविध्यपूर्ण रहा है। 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में उन्होंने अपने व्यापक, गहन, अध्ययन तथा अनुभवों से सीमित दायरे को छेद देकर विभिन्न क्षेत्रों और समाज के स्तरों से चयन कर भाषा का सशक्त रूप तथा निखार लाया है। अत: हम अध्ययन की सुविधानुसार 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों की भाषा को दो भागों में विभाजित करते हैं -

जैसे - 1) विविध शब्दों का प्रयोग।

2) भाषा सौंदर्य के साधन।

6.2 विविध शब्दों के प्रयोग :

'जयप्रकाश कर्दम' जी के 'करुणा' तथा 'छप्पर' उपन्यासों में विभिन्न क्षेत्रों के एवं समाज के स्तरों के शब्दों का मार्मिक प्रयोग हुआ है। इन उपन्यासों में तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी आदि शब्दों का विवेचन-विश्लेषण इस प्रकार द्रष्टव्य हैं -

6.2.1 तत्सम शब्द :

'तत्सम' से तात्पर्य - ज्यों के त्यों। 'तत्सम' वे शब्द हैं जो संस्कृत से आए

हैं और बिना किसी विकार या परिवर्तन के हिंदी भाषा के अंग बन गए हैं - अर्थात जो अपने मूल रुप में ही प्रयुक्त होते हैं।[5] 'जयप्रकाश कर्दम' जी के 'करुणा' तथा 'छप्पर' उपन्यासों में प्रयुक्त 'तत्सम' शब्दों के उदाहरण इसप्रकार द्रष्टव्य हैं -

जैसे - जीवन, मृत्यु, नेत्र, शांति, नेता, साहित्य, दु:ख, आमन्त्रित, मुख, अमृत, आकांक्षी, विवाह, आत्महत्या, उपदेश, उत्साही, ग्रह, आस्था, राजनीतिक, अहं, संस्कार, धर्म, पंडित, पाखंड, देवता, यज्ञ, कार्य, ईश्वर, ज्योतिष, क्रोध, आर्शीवाद, विद्या, धर्मग्रंथ, मन, शीघ्र, हस्ती, त्याग, प्रतीक्षा, व्यक्ति आदि।

अत: उक्त शब्द संकेत पात्रों के भावों को व्यक्त करते हैं। 'जयप्रकाश कर्दम' जी ने प्रस्तुत उपन्यासों में व्यवहारोपयोगी तत्सम शब्दों का प्रयोग किया हैं।

6.2.2 तद्भव शब्द :

'तद्भव शब्द' वे शब्द हैं जो संस्कृत से उत्पन्न हैं, अर्थात् जिन शब्दों का मूल स्त्रोत तो संस्कृत है, किन्तु हिंदी में उनका प्रयोग विकृत रूप में होता है।"[6] साहित्य में कथ्य के अनुरूप भाषा में सहजता और स्वाभाविकता लाने के उद्देश्य से 'तद्भव' शब्दों का प्रयोग आवश्यक होता है।

जैसे - किसान, हृदय, पिता, काम, हजार, शिकार, सूरज, पान, सेवा, पुस्तकालय, आकाशवाणी, हाथ, घर, आँसू, गाँव, नाक, आग, सेवा, सहृदय, बहू, कटुता, सद्भाव, लाल, आदि।

अत: उक्त शब्दों द्वारा विवेच्य उपन्यासों की विषयवस्तु रोचक, सरल तथा गतिशील बनाने में 'जयप्रकाश कर्दम' जी ने 'तद्भव' शब्द प्रयोग मार्मिकता से किया है।

6.2.3 देशज शब्द :

'देशज का अर्थ ग्रामीण अथवा लोकभाषा के शब्द है। देशज वे शब्द हैं जिनका स्त्रोत अज्ञात रहता है।[7] 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में 'देशज

शब्द' इस प्रकार द्रष्टव्य हैं -

जैसे - चारपाई, परवाह, पागल, मुँह, पुश्तैनी, पुरखे पत्थर, अधमरा, मिल्कियत, करवटें, तपन, भगवान, फँसवा, पहुँचवां, बारगी आदि।

अत: विवेच्य उपन्यासों में कम मात्रा में देशज शब्दों का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। जिसे व्यावहारिक रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

अत: स्पष्ट है कि 'जयप्रकाश कर्दम' जी के 'करुणा' तथा 'छप्पर' उपन्यासों में तत्सम, तद्‌भव, देशज आदि शब्दों का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है।इसके साथ-साथ विवेच्य उपन्यासों में विदेशी शब्दों का प्रयोग भी द्रष्टव्य है।वह इस प्रकार हैं-

6.2.4 विदेशी शब्द :

डॉ.हरदेव बाहरी लिखते हैं - "10 वीं - 11 वीं शती से आधुनिक आर्य भाषाओं का काल आरंभ होता है। तभी से लगभग एक सहस्त्राव्दी तक हिंदी प्रदेश पर विदेशी शासन का प्रभाव रहा है। विदेशी शिक्षा, धर्म, संस्कृति और फैशन के साथ विदेशी शब्द भी हिंदी में प्रविष्ट हुए हैं।"[8]

अत: हिंदी साहित्य में स्वतंत्रतापूर्व काल से विदेशी शब्दों का प्रचलन कम अधिक मात्रा में होता रहा हैं। 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में विदेशी शब्दों का प्रयोग इस प्रकार द्रष्टव्य हैं -

6.2.5 अरबी शब्द :

'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में 'अरबी' शब्दों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में दृष्टिगोचर होता हैं। इनके उदाहरण इसप्रकार हैं -

कर्ज, मशक्कत, फर्ज, फारिग, मुँहताज, ईज़ाद, हिफाजत, ख्याल, इम्तहान, कमीज़, किस्मत, तेवर, हरफ, आलम, मुकदमें, तहजीव, इज्जत, अहम्, इंसान, हाकिम, जिंदगी, आदमी, अलमारी, इर्द-गिर्द, ऐलान, इनाम, खत्म, उम्र, गरीब, कानून, इन्कार, इलाका, असर, शराव, आम, अदालत, मौत, असली, आमदनी, शबाब,

आनन्-फानन् आदि।

अत: उक्त शब्दों का प्रचलन दैनिक व्यवहार में किया जाता है। इन्हें विवेच्य उपन्यासों में 'जयप्रकाश कर्दम' जी ने प्रस्तुत किया है।

6.2.6 फारसी शब्द :

'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में 'फारसी' शब्दों का प्रयोग इसप्रकार द्रष्टव्य हैं -

जैसे - चिलम, परेशान, आवाज, गुलाब, किराया, तामील, जमीन, गुजर, हरग़िज, मरहम, तकदीर, ताल्लुकात, सिपाही, कामयाब, सितार, आराम, चीज़, शादी, बीमारी, चमक, शोर, आसमान, जहर, आदि।

अत: 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में अरबी शब्दों के साथ-साथ 'फारसी' शब्दों का प्रयोग काफी मात्रा में दृष्टिगोचर हैं।

6.2.7 अंग्रेजी शब्द :

'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग काफी मात्रा में द्रष्टव्य है। वे इसप्रकार हैं -

जैसे - कालोनी, एडजस्ट, हैंड-टू-माउथ, टैक्स, बिजनेस, स्कूल-कॉलोजों, ओवर-टाईम, रजिस्टर, एक्सप्रेस-ट्रेन, व्रेक, क्लीनिक, स्टैथिस्कोप, इमेज, हॉस्टेल, कैरिअर, होमवर्क, लिफ्ट, रिजल्ट, रजिस्ट्रेशन, मीटिंग, क्रीमीलेयर, इण्टरमीडिएट, डॉक्टर, प्रावईट-स्कूल, क्लर्क, रिटायर, लाइसेन्स, ऑपरेशन, मैगजीन, इन्जीनियरिंग, रेल्वे-स्टेशन, आंटी, सर, ब्लैक-मार्किटिंग आदि।

अत: कहना सही होगा कि 'जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में अंगेजी शब्दों की भरमार दृष्टिगोचर होती है।

6.2.8 संस्कृत शब्द :

विवेच्य उपन्यासों में अरवी, फारसी, अंग्रेजी शब्दों के साथ-साथ संस्कृत

के भी शब्द अधिकांश रूप में द्रष्टव्य हैं -

जैसे - ब्राह्मण, हाथ, पुत्रवत्, जल, दूध, विश्राम, कंठस्थ, पैत्रक, अनुनय, दांत, कहानी, हर्ष, क्रियान्वित, कृतज्ञता, शरीर, सूर्य, भाई, अचानक, पराजय, दर्शन, वरिष्ठ, मन्दिर, अन्यमनस्क आदि।

अत: संस्कृत शब्दों के कारण विवेच्य उपन्यासों में 'भाषा' स्वाभाविक रूप में द्रष्टव्य हैं।

6.3 अन्य शब्द :

विवेच्य उपन्यासों में 'जयप्रकाश कर्दम' जी ने भाषा में सहजता, स्वाभाविकता और पात्रानुकूल कथ्य की दृष्टि से अनेक प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया हैं। इसमें ध्वन्यार्थक शब्द, निरर्थक शब्द, पुनरूक्ति शब्द, अपशब्द और संयुक्त शब्दों आदि का प्रयोग किया हैं। इनका विस्तार से विवेचन-विश्लेषण इस प्रकार हैं -

6.3.1 ध्वन्यार्थक शब्द :

विवेच्य उपन्यासों में भाषा को सहजता प्रदान करने तथा वातावरण की यथार्थ स्थिति को चित्रित करने के लिए 'जयप्रकाश कर्दम जी ने 'ध्वन्यार्थक शब्दों का सुंदर प्रयोग किया हैं। जैसे -

तेज हवा चलने की ध्वनि	-	सॉय-सॉय।
वाद्य बजाने की ध्वनि	-	ढब-ढब-ढब।
बरसात की ध्वनि	-	किनमिन किनमिन।
थूंकने की ध्वनि	-	थू - थू आदि।

अत: विशिष्ट आवाज को व्यक्त करने के लिए 'ध्वन्यार्थक शब्दों का प्रयोग किया है जो विवेच्य उपन्यासों में सार्थक द्रष्टव्य हैं।

6.3.2 निरर्थक शब्द :

निरर्थक शब्द पात्र मनोदशा, परिस्थिति को व्यंजित करने में सहायक होते

हैं। विवेच्य उपन्यासों में प्रयुक्त निरर्थक शब्द के उदाहरण इस प्रकार द्रष्टव्य हैं -

जैसे - रहने-सहने, ढोर-डांगरों, घास-फूस, दुबला-पतला, थकी-मांदी, उथल-पुथल, हिल्ला-रुजगार, साफ-सुथरा, मैली-कुचैली, खुसर-फुसर, आपा-धापी, अलग-थलग, गाली-गलौच, शोर-शराबा, हक्का-बक्का, तहस-नहस, उल्टी-पुल्टी, रोना-धोना, करे-धरे, दुक्खम-सुक्खम, ऐरे-गैरे, सिट्टी-पिट्टी, पानी-वाणी, ठीक-ठाक, हल्का-फुल्का, उमड-घुमड, छेड-छाड, पूछ-ताछ, उलटा-पुलटा, ताना-बाना, खण्ड-भण्ड आदि।

अत: विवेच्य उपन्यासों में निरर्थक शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में दृष्टिगोचर होता है।

6.3.3 द्विरुक्त शब्द :

साहित्यिक रचनाओं में भाषागत सौंदर्य की अभिवृद्धि के हेतु प्राय: द्विरुक्त या पुनरुक्ति शब्दों का प्रयोग किया जाता है। 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में प्रयुक्त द्विरूक्त शब्द भाषा में सहजता, सरलता तथा प्रभावी, रोचक बनाने में सहायक हुए हैं।

जैसे- जल्दी-जल्दी, खिला-खिला, धीरे-धीरे, जैसे-जैसे, वैसे-वैसे, गाते-गाते, कभी-कभी, दर-दर, आदमी-आदमी, अपनी-अपनी, त्राहि-त्राहि, रोज-रोज, सोचते-सोचते, उठाए-उठाए, छोटे-छोटे, पीछे-पीछे, हल्की-हल्की, सीधे-सीधे, कहते-कहते, कर-कर, एक-एक, बीच-बीच, उखड़ा-उखड़ा, नई-नई, सौ-सौ, साफ-साफ, क्या-क्या, बड़े-बड़े, खिल-खिल, लम्बी-लम्बी, काली-काली, खोयी-खोयी, अभी-अभी, भिन्न-भिन्न, अंग-अंग, अलग-अलग, खुशी-खुशी, खंड-खंड, गाँव-गाँव, जुग-जुग, अकेला-अकेला, थर-थर, बार-बार, गली-गली, पड़ा-पड़ा, नन्हीं-नन्हीं, साथ-साथ, ठुनक-ठुनक, कैसी-कैसी, आहिस्ता-आहिस्ता, भाँति-भाँति, वारी-वारी, बुझी-बुझी, कभी-कभी, सहते-सहते, मार-मार, पुन:-पुना, पसीने-पसीने, अंग-अंग,

मोटी-मोटी, बिलख-बिलख, उछल-उछल, करते-करते, जहाँ-जहाँ, जन-जन, सूना-सूना, हजार-हजार, बना-बना, चीख-चीख, जोर-जोर, ढोते-ढोते, ऊँची-ऊँची आदि।

अत: उक्त विवेचन में विवेच्य उपन्यासों में द्विरुक्त शब्द प्रयोग प्रचुर मात्रा में दृष्टिगोचर हैं।

6.3.4 संयुक्त शब्द :

'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में 'ध्वन्यार्थक शब्द', निरर्थक शब्द, द्विरुक्त शब्द आदि के साथ-साथ 'संयुक्त शब्द' भी द्रष्टव्य हैं -

जैसे- टूटी-फूटी, दुमंजले-तिमंजले, खाने-पीने, दिन-प्रतिदिन, पढ़ाई -लिखाई, छोटा-मोटा, ऊँच-नीच, आस-पडोस, गीत-संगीत, उठने-बैठने, लुँज-पुँज, हमारे-तुम्हारे, नास्तिक-आस्तिक, दीन-हीन, सिलाई-बुनाई, अनुनय-विनय, सीधा-साधा, नंगे-अंधनंगे, इधर-उधर, घुल-मिल, भरा-पूरा, आदान-प्रदान, व्यथा-कथा, माता-पिता, आना-जाना, उछलता-कूदता, मिलना-जुलना, चहल-पहल, देश-विदेश, उठ-बैठ, जोड़-तोड़ आयी-गयी, प्रचार-प्रसार, दाये-बाये, आकार-प्रकार, हेर-फेर, तन-मन आदि। अत: विवेच्य उपन्यासों में 'संयुक्त शब्द' प्रचुर मात्रा में दृष्टिगोचर होते हैं।

6.3.5 अपशब्द :

प्रतिरोध, आक्रोश तथा संघर्ष करते समय विशिष्ट पात्रों के व्यक्तित्व को उजागर करनें में 'अपशब्दों का प्रयोग किया जाता है। विवेच्य उपन्यासों में अपशब्द के उदाहरण इस प्रकार द्रष्टव्य है - जैसे - साले, हरामजादे, बदतमीजी, मूत, औलाद, भेड़िये, रण्डी, असैनी, कुलच्छनी, कुल्टा, वेश्या, कायर आदि।

अत: जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में 'अपशब्दों' का प्रयोग अल्प मात्रा में हुआ हैं।

निष्कर्षत: कहना सही होगा कि जयप्रकाश कर्दम जी ने विवेच्य उपन्यासों में तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी शब्दों का प्रयोग सार्थक रूप में किया हुआ हैं।

6.4 भाषा सौंदर्य के साधन :

साहित्य सृजन की महत्ता तथा सार्थकता उस रचना में निहित भावों और विचारों को सहज, सरल तथा आकर्षक तथा प्रभावी अभिव्यक्ति से होती है। जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में भाषा को सौंदर्यवती बनाने के हेतु विविध उपकरणों का प्रयोग हुआ है। जैसे - पात्रानुकूल भाषा, उपदेशात्मक भाषा, आत्मकथात्मक भाषा, आक्रमक तथा क्रांतिकारी भाषा, दलित जीवन के लिए प्रेरणादायी भाषा, वर्णनात्मक भाषा, मुहावरें, लोकोक्तियाँ तथा सुक्तियाँ आदि। अत: उक्त भाषा के उपकरणों का विवेचन-विश्लेषण यहाँ इसप्रकार प्रस्तुत हैं -

6.4.1 पात्रानुकूल भाषा :

रचनाकार अपनी रचना को प्रभावी रोचक और गतिशील वनाने के लिए कथ्य तथा पात्रों का सुनियोजित समन्वय करता है। वह रचना में पात्रों के व्यक्तित्व को जीवंत रूप में पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने के लिए पात्रों के अनुरुप भाषा का संयोजन करता है। अत: जयप्रकाश कर्दम जी की भाषा भी इन तथ्यों के लिए प्रतिबद्ध रही हैं। इन्होंने 'करुणा' तथा 'छप्पर' उपन्यासों में विविध क्षेत्रों के पात्रों की पात्रानुकूल भाषा का सशक्त मार्मिक चित्रण किया है। वह इस प्रकार द्रष्टव्य हैं -

'करुणा' उपन्यास में पात्रानुकूल भाषा दृष्टिगोचर होती है। जैसे - "रमेश की भाषा में निराशा, पीड़ा, विषाद, विवशता, विद्रोह तथा समाज कल्याण की भावना द्रष्टव्य है। सूरज की भाषा में उद्दडता, शरारती पन है। ठाकुर सुखदेव सिंह की भाषा में सामंती संस्कार तथा स्वार्थी भावना के पूट दृष्टिगोचर हैं। अत: इस उपन्यास की नायिका 'करुणा' की भाषा में त्याग, समर्पण, समता, विश्वमानवता, शांति, अहिंसा के विचारों की वाहक भावना दृष्टिगोचर हैं। जैसे - करुणा कहती है - "जव लगा कि मेरे चारों ओर एक सन्नाटा, एक स्तब्धता व्याप्त होती जा रही है तथा मैं गहन तिमिर में डूबती जा रही हूँ। जव लगा कि मैं दु:ख और विषादों के महासमुद्र में फंस गयी हूँ और

जब इन समस्त त्रासदायक स्थितियों से उबरना कठिन लगने लगा तब मुझे यही मार्ग सबसे उचित लगा। यही ऐसा रास्ता है जिसपर चलकर अपना भी तथा समाज के दूसरे लोगों का भी कल्याण किया जा सकता है। सुख और शांति की ओर ले जाने वाला यही मार्ग मुझे उचित लगा और मैंने भौतिक जीवन का मोह त्याग कर यह चीवर धारण कर लिया।"[9] करुणा की इस भाषा में उसके भावों का प्रतिनिधित्व हुआ है।

'छप्पर' उपन्यास में पात्रानुकूल भाषा के संकेत स्थान-स्थान पर मिलते हैं। सुक्खा की भाषा में स्वाभिमान तथा विद्रोह की भावना है। रमिया की भाषा में त्याग तथा पति के प्रति समर्पण है। ठाकुर हरनामसिंह की भाषा में सवर्ण मानसिकता मौजूद है। काणेपंडित की भाषा में रूढ़ि-परंपरा तथा सनातन विचारों की भावना है। हरिया की भाषा में सहानुभूति एवं सहयोग की भावना द्रष्टव्य है। रजनी की भाषा में सामाजिक समता तथा मानवतावादी विचारधारा की भावना ओतप्रोत हैं। कमला की भाषा में विवशता, त्याग तथा विद्रोही भावना दृष्टिगोचर होती है।

अत: इस उपन्यास का नायक चंदन की भाषा सामाजिक क्रांति तथा समाज प्रबोधन का प्रतीक है। चंदन कहता है - "उन लोगों को शिक्षित करूँगा मैं। इन सोए हुए लोगों को जगाऊँगा और उनमें जागृति पैदा करूँगा ताकि अपने शोषण की जंजीरों को तोड़ फेंकने के लिए वे उठ खड़े हो। उन्हें खड़ा होना सिखाऊँगा मैं। स्कूल खोलूँगा और इन गरीबों के रेत-मिट्टी में खेलते फिर रहें बच्चों को पढाऊँगा।"[10] यहाँ सामाजिक क्रांति के दर्शन चंदन की भाषा में होते हैं।

अत: कहना सही होगा कि 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों की भाषा पात्रानुकूल दृष्टिगोचर होती है।

6.4.2 उपदेशात्मक भाषा :

उपदेशात्मक भाषा के द्वारा रचनाकार पाठकों के सम्मुख जीवन के नीतिमूल्य, आदर्शो को प्रस्तुत करता हैं। इस भाषा के द्वारा रचनाकार पाठकों को

समाज में व्याप्त अज्ञान, अधर्म, अनादर्श से अवगत कराता है। अर्थात सामाजिक जागृति के हेतु इस भाषा का प्रयोग किया जाता है। विवेच्य उपन्यासों के कथ्य में उपदेशात्मक भाषा इस प्रकार द्रष्टव्य हैं -

'करुणा' उपन्यास में भी 'उपदेशात्मक भाषा का उदाहरण द्रष्टव्य है। सामाजिक शोषण का शिकार बना विद्रोही कैदी की भाषा में उपदेशात्मकता के साथ-साथ आक्रोश भी है। वह कहता है - "हुक्का चुराना, सेंध लगाना, जेब काटना, ये कोई काम है। अरे कुछ करना ही है तो इन पूँजिपतियों की हत्या करों ताकि गरीब, कमजोर लोगों को शोषण से मुक्ति मिले। किसी को लूटना ही है तो इन अमीरों की तिजोरियों को लूटों जिनमें लाखों, करोंडो गरीब मजदूरों के खून-पसीने की कमाई भरी पड़ी हैं। उन्हें ही लूटो। अपना पेट भी भरों और दूसरों का भी।"[11]

'जयप्रकाश कर्दम' जी के 'छप्पर' उपन्यास में उपदेशात्मक भाषा का उदाहरण इस प्रकार दृष्टिगोचर है कि इस उपन्यास का नायक 'चंदन' जो सामाजिक क्रांति का प्रतीक है वह समाज में सुधार लाने हेतु कहता है - "आप लोगों में से जो लोग शराब या अन्य नशीलें पदार्थों का सेवन करते हैं, वे उनका सेवन करना वन्द कर दें। जो लोग बीड़ी-सिगरेट या पान-तम्वाकू आदि पीते-खाते हैं वे उसका त्याग कर दें जो लोग फिल्म-तमाशे आदि देखने के शौकीन हैं वे उनको देखना वन्द कर दें और जो लोग चाट पकौडी अदि खाते पीते हैं वे उसको छोड़ दे। आप में से वहुत से लोग कभी -कभी मांस खाते होंगे। अन्य सब्जीयों की तुलना में मांस वहुत महंगी सब्जी है इसलिए मांस खाना छोडा जा सकता है। मैं समझता हूँ कि ऐसा करने से आप अपने वच्चों की पढ़ाई का खर्च अवश्य पूरा कर सकेंगे।"[12] चंदन एक आदर्शवादी नायक होने के कारण उसकी भाषा में भी उपदेशात्मकता है।

अत: जयप्रकाश कर्दम जी ने विवेच्य उपन्यासों में उपदेशात्मक भाषा का प्रयोग बड़ी मार्मिक दृष्टि से किया है।

6.4.3 आत्मकथात्मक भाषा :

रचनाकार जब प्रथम पुरूष 'मैं' के रूप में अपनी आत्मकथा के समान कथा का वर्णन करता है या कथा का अन्य कोई पात्र लेखक का स्थान ग्रहण कर पाठकों से संवाद स्थापित करता है, वहाँ 'आत्मकथात्मक भाषा' दृष्टिगोचर होती है -

जैसे - 'करुणा' उपन्यास का पात्र रमेश जो सामाजिक शोषण का शिकार बना है। वह समाज में स्थित भ्रष्ट व्यवस्था के प्रति मन ही मन में आक्रोश व्यक्त करते हुए खुद के बारे में कहता है - "जहाँ पर आदमी के अधिकारों का इस तरह हनन हो जहाँ एक जवान और अविवाहित व्यक्ति को खस्सी होने को मजबूर होना पड़े ऐसे समाज और ऐसी व्यवस्था का क्या लाभ।"[13]

'छप्पर' उपन्यास में चित्रित ठाकुर हरनामसिंह की आत्मकथात्मक भाषा का प्रयोग इस प्रकार द्रष्टव्य है -

जैसे - "अत्याचार सहकर भी इतनी सदाशयता? सुक्खा में देखकर ठाकुर को अपना समग्र व्यक्तित्व बौना सा लगता है। वे सोचते हैं कि "नितांत निर्धन होते हुए भी कितना सुख और संतोष है सुक्खा के पास, जबकि इतना सब कुछ होते हुए भी सुख और संतोष के नाम पर क्या है उनके पास केवल शून्य ही तो। ...क्या है सुक्खा के सुक्खा और संतोष का आधार सबको अपना मानकर और सबका होकर रहना यही तो...। और जैसे उनके अन्त:करण से आवाज आयी 'सचमुच'! यही तो है जीवन का असली ढंग।"[14] यहाँ ठाकुर के आत्मा की आवाज उभरी हुई देखने को मिलती हैं।

अत: जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में 'आत्मकथात्मक भाषा' का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है।

6.4.4 आक्रमक तथा क्रांतिकारी भाषा का प्रयोग :

अन्याय, अत्याचार, शोषण के विरूद्ध विद्रोह कर सामाजिक समता, स्वतंत्रता, न्याय को स्थापित करने के लिए विवेच्य उपन्यासों में आक्रमक तथा क्रांतिकारी

भाषा का प्रयोग दृष्टिगोचर हैं -

जैसे - 'करुणा' उपन्यास में भी एक जेल कैदी विद्रोही पात्र कहता हैं - "तुम सब कायर हो। तुम्हारे साथ यहाँ कितना अन्याय होता है। तुम्हारा कितना शोषण होता है। पर तुम लोग जाने कौन-सी धातु के बने हुए हो कि सब कुछ चुपचाप सहते हो। अखिर तुम भी आदमी हो! अन्याय और शोषण के विरूद्ध आवाज उठ़ाना तुम्हारा मौलिक अधिकार है।"[15] यहाँ पर विद्रोही जेल कैदी की भाषा में क्रांति के दर्शन होते हैं।

'छप्पर' उपन्यास का नायक चंदन कहता हैं - "हमें समाज से टक्कर लेनी है, सत्ता से लड़ाई लड़नी हैं, जुल्म और शोषण के विरूद्ध संघर्ष करना हैं।"[16] यहाँ चंदन की भाषा में आक्रमकता और क्रांतिकारी विचारों के दर्शन होते हैं।

अत: कहना सही होगा कि जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों के उक्त संकेत 'आक्रमक' तथा 'क्रांतिकारी भाषा' का द्योतक हैं।

6.4.5 दलित जीवन के लिए प्रेरणादायी भाषा :

'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में दलित व्यक्तियों के लिए प्रेरणादायी भाषा का प्रयोग ठौर-ठौर पर हुआ है।

'करुणा' उपन्यास में आदर्श समाज स्थापना के लिए प्रेरित किया हुआ है। इस उपन्यास में रमेश शिक्षित युवक दलित समाज को प्रेरणा देते हुए कहता है - "ऐसा समाज ज्यो न्याय पर समता और भातृत्व की भावनाओं पर आधारित हो। जहाँ शोषण न हो, जोर जबरदस्ती न हो, अन्याय न हो। जिस समाज के मनुष्यों का नैतिक चरित्र ऊँचा हो।"[17]

'छप्पर' उपन्यास का पात्र एक दलित मजदूर किसान 'सुक्खा' की शोषण तथा गुलामी की जंजीरों को तोड़कर स्वाभिमानी जीवन जीने की लालसा इस वात का संकेत है कि वे अपनी 'अस्मिता' के प्रति सजग होते हुए कहता है - "मैं मर जाऊँगा,

भूखा प्राण तज दूँगा। सब कुछ वर्दाश्त कर लूँगा मैं पर चंदन को इस नर्क में नहीं पड़ने दूँगा। कभी जिस नर्क में मुझे रहना पड़ा है।"[18]

अत: उक्त कथन 'आदर्श समाज की संकल्पना को स्पष्ट करता है। जिससे समाज का हर एक दलित व्यक्ति प्रेरणा पा सकता है।

6.4.6 वर्णनात्मक भाषा :

'वर्णनात्मक भाषा' के माध्यम से रचनाकार निर्लिप्त भाव से करता चला जाता है।

'करुणा' उपन्यास में वर्णनात्मक भाषा इसप्रकार द्रष्टव्य हैं -

जैसे - "सूर्य का लाल चेहरा भी कोहरे के धुंधलके में सिमट कर रह गया था। नंगे पाँव ओस भरी ठण्डी घास पर पैर घसीटते से चलते, कड़कडाती सर्दी से जूझने को अकारथ प्रयास कर रहे थे वह। सूर्य कुछ ऊपर उठा। किरणें धरती पर छितरा गई । पक्षियों का कलख गूँजने लगा। गाँव के बच्चे सिकुड़े-सिमटे से घरों से बाहर झाँकने को धामपुर की धरती पर इस तरह दिन निकल आया था।"[19]

विवेच्य उपन्यासों 'छप्पर' में वर्णनात्मक भाषा का उदाहरण इस प्रकार हैं - "बाहर घुप्प अंधेरा था। दिन का स्वच्छ-निर्मल आकाश इस समय मेघमालाओं से आच्छादित था। चन्द्रमा भी बादलों की ओट में कहीं छिप गया था। हवा के तेज झोकों के साथ हल्की-हल्की फुहारें आ रही थी। फुहारों का एक तेज झोंका आया और बाहर घूमते सुक्खा को भिंगों गया वापस छप्पर के अन्दर लौट गया सुक्खा और पुन: बॉस की टूटी चारपाई पर आ पड़ा।"[20] उक्त कथन 'वर्णनात्मक भाषा' का संकेत हैं।

अत: जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में वर्णनात्मक भाषा पर्याप्त मात्रा में दृष्टिगोचर होती है। इसके माध्यम से कहीं पर वे दृश्य की पृष्ठभूमि सामने रखने में सफल होते हैं तो कहीं पर चरित्र-चित्रण में उभार लाने के लिए भी सफल होते हैं।

6.4.7 मुहावरें :

भाषा को सजीव और प्रभावशाली बनाने के हेतु मुहावरेंदार भाषा का प्रयोग किया जाता है। मुहावरें के बारे में अमी अधार 'निडर' लिखते हैं - "मुहावरा उन वाक्यांश या खंड, खंड वाक्या को कहते हैं जिनका अर्थ उस भाषा में साधारण या सीधा न होकर विलक्षण या वैचिञ्यपूर्ण हो। मुहावरा भाषा का विशिष्ट प्रयोग है, जिसे लाक्षणिक प्रयोग कहा जाता है। मुहावरों के प्रयोग से भाषा में कसावट, चमत्कारिकता, विलक्षणता आती हैं। मुहावरा भाषा के लिए संजीवनी होता है। मुहावरा पदवंध होता है। अत: स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त नहीं होता। मुहावरें की सार्थकता किसी वाक्य का अंग बन जाने में होती है।"[21] अत: मुहावरें भाषा को प्रभावशाली वनाकर विशिष्ट अर्थ को स्पष्ट करने में सहायक होते हैं।

'जयप्रकाश कर्दम' जी के 'करुणा' तथा 'छप्पर' उपन्यासों में प्रयुक्त मुहावरें के उदाहरण इस प्रकार द्रष्टव्य है -

जैसे - 'आँखों के आगे अंधेरा छा गया', 'कुलेजा मँह को आना', 'वरस पड़ना', 'मुँह ताकना', 'कान खडे होना', 'पानी फेरना', 'सिर आंखो पर लेना', 'वात को पानी देना', 'दो टूक जवाब देना', 'दिमाग सातवें आसमान पर होना', 'दिल पर पत्थर रखना', 'खुन पी जाना' आदि।

अत: कहना सही होगा कि 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में पर्याप्त मात्रा में मुहावरों का यथोचित प्रयोग कर भाषा सौंदर्य को गरिमा प्रदान की है।

6.4.8 लोकोक्तियाँ :

लोकोक्तियों को कहावते भी कहा जाता है। इसके माध्यम से मार्मिक शव्दों द्वारा व्यक्तियों के गलतियों पर व्यंग्य कसा जाता है। इनमें जीवन के तथ्य को लेकर सत्य को वड़ी खुवी से स्पष्ट किया जाता है। लोकाक्तियों के वारे में डॉ.अर्जुन चव्हाण जी की मान्यता है कि "कहावत स्वयंसिद्ध होती है। मुहावरा एक वाक्यांश होता

है, तो कहावत पूरा वाक्य। कहावत मानव जीवन की अपेक्षा सामाजिकता उसमें निहित होती है।"[22] अत: लोकोक्ति गागर में सागर भरने का कार्य करती है। 'जयप्रकाश कर्दम' जी के विवेच्य उपन्यासों में लोकोक्तियों का प्रयोग स्वाभाविक रूप में इस प्रकार द्रष्टव्य हैं -

'काला आखर - भैस बराबर'

'लेना एक न देना दो'

'अकेला चना भाड नहीं फोड सकता'

कुछ पाने के लिए कुछ खोना पड़ता है'

एक जान - सौ आफत'

मानों तो सब कुछ है, न मानों तो कुछ नहीं'

'आग में घी डालना' आदि।

अत: कहना सही होगा कि 'जयप्रकाश कर्दम' जी ने विवेच्य उपन्यासों में लोकोक्तियों का प्रयोग कर भाषा की प्रभावशीलता पर ध्यान दिया है।

6.4.9 सूक्तियाँ :

विवेच्य उपन्यासों में सूक्तियों के दर्शन भी होते हैं। ये सूक्तियाँ सुविचार के रूप में लोगों को मार्गदर्शन करती है। सूक्तियों की महत्ता के बारे में डॉ.क्षितिज धुमाळ कहते है - "उपन्यास में चित्रित सूक्तियाँ भाषा के सौष्ठव को बढ़ाती हैं और भाषा की सशक्तता में चार चाँद लगाती हैं।"[23]

जयप्रकाश जी के विवेच्य उपन्यासों में सूक्तियों के उदाहरण इस प्रकार है-

- 'जो हिम्मत से आगे बढ़ते हैं वे ही अपने साध्य का प्राप्त करते हैं।'
- 'श्वास-प्रवाह का रूक जाना ही मौत नहीं है, इन्सानियत से गिरना भी तो मौत हैं।'

- 'मनुष्य सबसे बड़ी सत्ता है दुनिया में मनुष्य से बड़ी कोई चीज नहीं।'
- 'किसी भी कार्य को करने के लिए दृढ इच्छा शक्ति का होना जरूरी है।'
- 'जिसमें जितनी अक्ल होती है वह उतनी ही बात करता है।'
- 'जन्म के आधार पर नहीं अपितु अपने गुण कर्म तथा योग्यता के आधार पर ही मनुष्य श्रेष्ठ अथवा हीन होता है।'
- 'जो व्यक्ति शील और सदाचार का पालन करें जो ईमानदार और सत्यनिष्ठ हो जिसके मन में छल कपट या धोंखा न हो जो मेहनत से कमाकर खाता हो वह श्रेष्ठ हैं।'
- 'जीवन जीने के लिए होता है नष्ट करने के लिए नहीं।'
- 'लोग कटुता और कठोरता त्याग कर प्रेम और सद्‌भाव के साथ रहें दूसरों को सम्मान दे तथा खुद भी सम्मान के साथ जिएँ।
- 'टुटकर जुड़ना ही तो जीवन है।' आदि।

उक्त सूक्तियों के दर्शन विवेच्य उपन्यासों में होते हैं।

6.5. उद्देश्य तात्पर्य :

'उपन्यास' के उद्देश्य से तात्पर्य मानवीय जीवन की व्याख्या या आलोचना से है। उद्देश्य को -उद्देश्यबीज, विचारदर्शन, जीवन दर्शन आदि नामों से अभिहित किया जाता है। साहित्य के क्षेत्र में उपन्यास को मानव जीवन का वृहत चित्र कहा जाता है। तथा साहित्य समाज का दर्पण है, इस उक्ति के सार्थकता को बनाए रखने के लिए रचनाओं में नीतिशिक्षा, कौतुहल सृष्टि, सुधार भावना, मनोरंजन का निहित होना उपन्यासकार का मुख्य दायित्व हैं। अत: किसी भी रचना की मूल्यवत्ता तथा महत्ता उसके मुलभूत रचना प्रक्रिया में निहित उद्देश्य द्वारा ही निर्धारित होती है। अर्थात 'उपन्यास' में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्वजीवन की स्थितियों, समस्याओं और संबंधों की सशक्त अभिव्यक्ति हो। डॉ.देवी प्रसाद गुप्त ने उपन्यास का व्यापक उद्देश्य बताते

हुए लिखा है - "विज्ञान युग के जीवन की विविधताओं व्यक्ति जीवन के अन्तर्बाहय द्वंद्व सामाजिक संघर्षो, राष्ट्रीय समस्याओं और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्वमानवतावाद आस्थाओं का उन्मेष उद्घाटन और उन्नयन हैं।"[24]

स्पष्ट है कि उपन्यास के लक्ष्य की व्याख्या करते समय अधिकांश साहित्याचार्यो ने मानव जीवन की अभिव्यक्ति को प्रमुख लक्ष्य बनाया है। अर्थात साहित्य भावाभिव्यक्ति, आत्माभिव्यक्ति का एक महत्वपूर्ण साधन है। जिसमें मानवहित की भावना सन्निहित रहती है।

6.5.1 विवेच्य उपन्यासों का उद्देश्य :

जयप्रकाश कर्दम जी ने विवेच्य दोनों उपन्यासों में भारतीय समाज व्यवस्था में जो सदियों से रुढ़ि-परंपरा से पीड़ित और शोषित दलित मानव द्वारा मानव समाज से बहिष्कृतों के जीवन यथार्थ को कथा-व्यथा की गाथा के विविध आयामों का कलात्मक एवं मार्मिक ढंग से अंकन किया है। अत: उनकी 'करुणा' तथा 'छप्पर' दोनों रचनाएँ उद्देश्यपूर्ण दृष्टिगोचर होती हैं। इसमें दलित जीवन की त्रासदी तथा समस्याओं का चित्रण करना, दलित विद्रोह को उभारना, दलित चेतना तथा दलित जागृति के भरसक प्रयत्न करना, सवर्ण मानसिकता में परिवर्तनवादी विचारधारा को बहाना और अम्बेडकरवादी विचारधारा की महत्ता वताना आदि उद्देश्यों को उजागर करते हुए निश्चित तथा सार्थक उद्देश्यों का गहराई के साथ यथार्थ रूप में अंकन किया है। कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों के उद्देश्य निम्नांकित हैं -

- दोनों विवेच्य उपन्यासों के द्वारा आजादी के साठ वर्ष के बाद भी दलित जन जीवन की पीड़ा में अधिक मात्रा में परिवर्तन नहीं हो रहा है, इसे दिखाना।
- बौद्ध धर्म के सिद्धांतों का विश्व शांति के लिए महत्त्व विशद करना।
- बौद्ध भिक्षुकों के द्वारा बौद्ध धम्म के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ समता और विश्ववंधुत्व की प्रतिष्ठापना करना।

- भारतीय समाज में समता, बंधुता, स्वतंत्रता, न्याय आदि के महत्व को विशद करना।
- परंपरागत सवर्ण समाज की संकुचित मानसिकता में परिवर्तन की आवश्यकता पर बल देना।
- दलित-शिक्षित युवकों की सवर्ण समाज के द्वारा दलितों पर होनेवाले अन्याय, अत्याचार के खिलाफ आक्रमक एवं विद्रोही विचारधारा पर प्रकाश डालना।
- दलित समाज के विकास के लिए शिक्षा का महत्व विशद करके दलित उद्धार के लिए दलितों को शिक्षित बनाना।
- परिवर्तित समाज-जीवन के साथ-साथ सवर्णो की अगली पीढ़ियों में होनेवाले बदलाओं का अंकन करना।
- दलित सर्वहारा मजदूरों के बीच के साहसिक और अम्बेडकरवादी विचारधारा को प्रस्तुत करना।
- दलित समाज के उद्धार के लिए अम्बेडकरवादी विचारधारा की आवश्यकता पर बल देना।
- दलित नारियों पर होनेवाले अन्याय, अत्याचार का दलित शिक्षित पीढ़ी द्वारा मुकाबला करना।
- दलितों के विकास में आनेवाले अवरोधों को दूर करके उनके विकास का मार्ग प्रशस्त बनाना
- दलित शोषण के खिलाफ आंदोलन की आवश्यकता पर बल देना।
- दलित किसान मजदूरों के जीवन में स्थित उदारता के दर्शन कराना।
- दलित अशिक्षित पीढ़ी द्वारा नयी शिक्षित युवकों की पीढी को आगे बढने के लिए बल प्राप्त कराना तथा प्रोत्साहित करना।

➢ सवर्ण युवतियों द्वारा शिक्षित नवयुवकों को दलित समाज सुधार के कार्य में मदद करना।

➢ सवर्ण नारियों की जातीय बंधन में अटकी प्रेम धारणा को दिखाना आदि अनेक उद्देश्य यहाँ चित्रित हैं।

6.6 विवेच्य उपन्यासों में निहित समस्या :

जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन की त्रासदी तथा समस्याओं का अंकन इसप्रकार द्रष्टव्य हैं -

6.6.1 व्यसनाधीनता या नशा-पान की समस्या :

व्यक्ति अपने दु:खों त्रासदी के विस्मरण हेतु किसी भी तरह के नशा का सहारा लेते हैं। परिणामत: जिससे मृत्यु होना, पास-पड़ोस के लोगों को तंग करना, परिवार को यातनाएँ देना, और जानबूझकर जुर्म करना ऐसी कोई समस्याओं को जन्म दिया जाता है। डॉ.उमा गगरानी इसके बारे में कहती है कि - "निम्नवर्ग के पात्र दुर्व्यसन में लिप्त है। वास्तव में मजदूर वर्ग अपने दु:ख को भूलने नशे का सहारा लेता है।"[25]

'करुणा' उपन्यास में भी धामपुर गाँव के सरपंच ठाकुर सुखदेव सिंह का बेटा सूरज जो दिन भर शराव और शबाब के नशे में रहता है। वह नशे में अपने पिता की हत्या करके गिरफ्तार भी होता है।

'छप्पर' उपन्यास का नायक चंदन इस समस्या को स्पष्ट करते हुए कहता है कि "सबसे बड़ी बुराई तो यही है कि ये लोग जितना कमाते हैं, उसका एक बड़ा हिस्सा दारूबाजी या जुए आदि में बर्वाद कर देते हैं। यद्यपि कुछ लोग इस व्यसन से मुक्त हैं किन्तु अधिकांश लोग इस व्यसन के शिकार हैं और यही कारण है कि रात-दिन कमरतोड़ मेहनत करके कमाने के वाद भी इनका जीवन स्तर ऊपर नहीं उठ पाता हैं। और हमेशा दूसरे के मुँह की ओर देखने वाले दीन-दरिद्र बने रहते हैं।"[26]

अत: स्पष्ट है कि विवेच्य उपन्यासों में व्यसनाधीनता या नशा-पान की

विकृति से उत्पन्न समस्याओं का यथार्थ चित्रण हुआ हैं।

6.6.2 पुलिस शोषण की समस्या :

समाज में पुलिस प्रशासन की नियुक्ति समाज की रक्षा, शांति तथा अपराध को मिटाने के लिए की है। किन्तु यही पुलिस जनता की रक्षक कम और भक्षक अधिक रही हैं। डॉ.कामिनी बाली जी के मतानुसार -

1. "पुलिस का रवैया पक्षपातपूर्ण रहता है, कानून व्यवस्था में अपनी मर्जी करती है और तभी क्रियाशील होती है जव प्रभावशाली व्यक्ति या लोगों का मामला रहें।
2. पुलिस गरीव प्रभावहीन नागरिक की शिकायत की सुनवाई नहीं करती। अत: आम नागरिक को मुसिबत के समय पुलिस से कोई उम्मीद संभव नहीं लगती है।
3. पुलिस में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण वास्तविक मामलों में भी सहायता लेनी कठिन है। समृद्ध व्यक्ति को इसकी सहज उपलब्धता ने पुलिस पर से लोगों का विश्वास हटा दिया है।"[27]

'करुणा' उपन्यास में एक शिक्षित युवक रमेश है। वह समाज में व्याप्त अन्याय, अत्याचार के खिलाफ संघर्षरत है। उसे पुलिसवाले गाँव के सरपंच का बेटा सूरज से रिश्वत लेकर रमेश को उसकी बहन की हत्या के झूठे अभियोग में गिरफ्तार करके जेल में बंद करते है।

'छप्पर' उपन्यास में एक मजदूर दलित हरिया है। वह सामाजिक शोषण का शिकार हुआ है। उसकी वेटी कमला पर हुए बलात्कार के पश्चात वह पुलिसवालों से न्याय माँगने जाता है, तो उसे पुलिसवाले डरा-धमकाकर वापस भेजते हैं। कमला स्वयं उनके बारे में कहती है कि "बापू गए थे थाने में रिपोर्ट लिखवाने लेकिन थानेदार की जेव मालिक ने पहले ही भर दी थी। रिपोर्ट लिखने की वजाए वापू को मार कर भगा दिया थानेदार ने।"[28] यहाँ पुलिस दवारा दुर्वलों पर होनेवाले अन्याय को चित्रित किया है।

अत: उक्त विवेचन इन बातों का संकेत है कि दलित समाज के जीवन की कई समस्याओं में से पुलिस के अन्याय, अत्याचार से पीड़ित रहना, यह भी एक समस्या द्रष्टव्य हैं।

6.6.3 बढ़ती जनसंख्या की समस्या :

काका कालेलकर ग्रंथावली के नौवें खंड में 'कामवासना का स्फोट' इस लेख में लिखा है - "इन दिनों जिस तरह दुनियाँ के सब देशों में लोगसंख्या की बाढ़ आई हैं। जिसे आजकल की परिभाषा में जनसंख्या का स्फोट कहते हैं। इससे मानवी जीवन को कई समस्याओं से गुजरना पड़ता है।"[29]

'करुणा' उपन्यास में बढ़ती जनसंख्या की समस्या का अंकन किया है। जैसे देश में अनियत्रित जनसंख्या बढ़ने से अज्ञान, बेरोजगारी, महँगाई, बीमारी ऐसे कई समस्याओं का चित्रण किया है। इसे नियंत्रित करने के लिए सरकार द्वारा नसबंदी के कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है जिसमें आम लोगों के शोषण को बढ़ावा मिला। इस नियंत्रण का अविवाहित दलित युवक रमेश शिकार बनता है। 'छप्पर' में इस समस्या का उल्लेख नहीं आया है।

6.6.4 भूख की समस्या :

ग्रामीण किसान मजदूर तथा निम्नवर्ग के अभाव भरे जीवन में उन्हें निरंतर श्रम करते हुए भी भूख अर्थात एक वक्त की रोटी भी नसीब नहीं होती है। कई दिन फाके पड़ते हैं। जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में भूख की समस्या का चित्रण द्रष्टव्य है - जैसे सुक्खा अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए कहता है कि - "तीन दिन हो गए घर में चुल्हा जले। बाकी सारे कष्टों को तो झेल लें हम, लेकिन पेट की आग से कैसे पार पाएं...।"[30] यहाँ आजादी के बाद भी भूख की समस्या कम नहीं हो सकी है, इस पर संकेत दिये हैं।

6.6.5 बाढ़ तथा अकाल की समस्या :

बाढ़ तथा अकाल की समस्या प्राकृतिक है। इसमें साधन-संपन्न लोगों को कोई भी हानि न होते हुए आम गरीब लोगों का ही नुकसान होता है।

यह समस्या 'छप्पर' उपन्यास में इस प्रकार द्रष्टव्य है कि - "मानसून न आने का नतीजा यह हुआ कि सारी फसल चौपट हो गई। पानी का जल स्तर नीचे चले जाने से हैडपम्पों में पानी आना बंद हो गया, अनेक बीमारियां फैल गई तथा महामारी और अकाल से लोग परेशान हो उठे। देश के दक्षिण-पूर्वी भागों में मानसून न केवल आ चुका था बल्कि इतना पानी बरसा कि कई नदियों में बाढ़ आ गई। गाँव के गाँव तहस नहस हो गए, लाखों लोग बेघर हो गए, हजारों आदमी और मवेशी पानी में बह गए।"[31]यहाँ अकाल तथा बाढ़ के कारण तबाह होनेवाले जनजीवन पर चिंतन किया है।

अत: उक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि दलित तथा आम लोगों के जीवन में बाढ़ तथा अकाल की समस्या कितना गंभीर परिणाम करती है।

6.6.6 मजदूर शोषण की समस्या :

मजदूर शोषण यह मिल कारखानों के मालिकों का अधिकार बन गया है। प्रा फडणीस मजदूरों के बारे में कहते है कि - "विभिन्न कारखानों में आठों-प्रहर खपनेवाला और मालिकों का उत्पादन वढ़ानेवाला एक अधिकार हीन पूर्जा याने मजदूर वर्ग है। यह मालिकों के जन्मसिद्ध शोषण का अधिकार होता है।"[32] जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में मजदूर शोषण का चित्र द्रष्टव्य है कि दिन रात मेहनत करके भी सुक्खा और हरिया को उचित मूल्य नही दिया जाता है अगर उसके खिलाफ आवाज उठाए तो मलिक लोग कहते है - "साले चले आते हैं, नखरा दिखाने, लीड़र वनते हैं, हरामजादें। काम-धाम करेंगे नहीं और चाहेंगे कि फैक्ट्री इनके नाम हो जाए।"[33] लेखक ने सुक्खा और हरिया जैसे मजदूरों के शोषण के संदर्भ में यहाँ चिंतन करते हुए मजदूर शोषण पर गंभीरता के साथ चिंतन किया है।

6.6.7 सेठ, साहुकार, जमींदारों द्वारा शोषण की समस्या :

भारतीय समाज व्यवस्था में सामान्य जन के शोषण के विविध आयामों में सेठ, साहुकार, जमींदारों का सक्रिय सहभाग रहा है। वे हमेशा अपने असामियों पर अन्याय करते हैं। गाँव की लगभग सारी भूमि उनके नाम होती है और उसमें काम करने के लिए गरीब दलित लाचार मजदूर वर्ग। डॉ.तेजसिंह का कहना है "यह वर्ग विलासी और मूलत: रुढ़िवादी और अनुद्यमशील था। अत: जमींदार वर्ग और अंग्रेजों के सहयोगी किसान मजदूर वर्ग का शोषक था।"[34] वे उन्हें समय-अवसर देखकर कर्जा देकर शोषण करते है। विवेच्य उपन्यास 'छप्पर' में जयप्रकाश कर्दम जी ने एक दलित मजदूर किसान सुक्खा के शोषण का चित्रण किया है। सुक्खा को लाला साहुकार घर पर कर्जा देकर घर हथिया लेता है। तथा जमींदार ठाकुर हरनामसिंह सुक्खा को खेत का लगान न चुकाने के कारण खेत से वेदखल किया जाता है। कानून से साहुकारी नष्ट होने के वाद भी आज सेठ साहुकारों द्वारा अभावग्रस्तों का शोषण हो रहा है। इस पर रोक लगाने में प्रशासकीय यंत्रणा असफल हो चुकी है। इसका यहाँ संकेत मिलता है।

6.6.8 धार्मिक व्यक्तिद्वारा शोषण की समस्या :

धर्म के रक्षण करनेवाले ईश्वर के नाम पर समाज के अज्ञान लोगों के भक्षक बने हैं। कर्दम जी के 'करुणा' उपन्यास में भी वौद्ध धर्म के भिक्षुओं के द्वारा लोगों के शोषण की समस्या को स्पष्ट करते हुए कहा है कि - "बहुत से भिक्षु शीलों का पालन नहीं करते। कई वुद्ध विहार अनाचार के अड्डे वन गए हैं। कुछ उपासकों ने यह भी शिकायत की, कि कई भिक्षु नशीले, पदार्थों का सेवन करते हैं। तथा धार्मिक कृत्यों में उनकी कोई रुचि नहीं हैं।"[35]

'छप्पर' उपन्यास में इस समस्या का अंकन करते हुए धार्मिकता की पाखंडता को उजागर किया है। उपन्यास का पात्र काणेपंड़ित के वारे में कहा जाता है कि - व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक किसी न किसी रूप में ब्राह्मण उससे टैक्स

वसूल करता है।"[36] प्रेमचंदजी ने भी धर्म पंडितोंद्वारा दलितों के होनेवाले शोषण का चित्रण अपनी कहानियों में किया हैं।

अत: विवेच्य उपन्यासों में द्रष्टव्य है कि समाज में धार्मिक लोगोंद्वारा अज्ञानी, दलित, आम लोगों का शोषण होता है।

6.6.9 देवी-देवता तथा अंधविश्वास की समस्या :

भारतीय समाज व्यवस्था में दलित समाज का सदियों से धर्म के नामपर शोषण होता आ रहा है। ज्ञान-विज्ञान, शिक्षा प्रसार-प्रचार के पश्चात भी लोगों के मन-मस्तिष्क में ईश्वर तथा अंधविश्वास की भावना घर कर बैठी हैं। डॉ.श्रीराम गुंदेकर का मन्तव्य है कि "लोगों की धर्म जाति कर्मकांड आदि के बारे में संवेदनाएँ मध्ययुगीन ही हो, तो 21 वीं सदीं की ओर जाते और संगणकीय भाषा की बात करना व्यर्थ है।"[37]

'छप्पर' उपन्यास का नायक चंदन दलित समाज जीवन में ईश्वर को एक त्रासदी के रूप में स्पष्ट करते हुए कहता है कि - "किसी भी अपदा के समय उससे निपटने के उपाय खोजने की बजाय देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना की जाती है, तरह-तरह के अनुष्ठान किए जाते हैं।"[38]

चंदन शहर में संतनगर जे.जे.कालोनी में एक झोपड़ी में रहता है। उसी साल समय पर बारिश नहीं होती जिससे लोग परेशान होकर अज्ञान के कारण आकाश के इन्द्र देव रूष्ठ हुए हैं, ऐसा समझकर उन्हें प्रसन्न करने के लिए एक यज्ञ का आयोजन किया जाता है। इस यज्ञ के लिए चंदा इकठ्ठा करते है। एक दिन चंदा माँगनेवाले लोग चंदन तक चंदा माँगते-माँगते पहुँचते हैं। चंदन इन लोगों के विचारों में परिवर्तन कर उनमें जागरुकता करते हुए कहता है कि "यह मान्यता गलत है कि यज्ञ करने से भगवान इन्द्र प्रसन्न होंगें और तब वर्षा होगी। वर्षा होगी मानसून के आने से। अभी मानसून नहीं आया है इसलिए वर्षा नहीं हो रही है।"[39] अर्थात चंदन इन अज्ञान लोगों के मन में स्थित अंधविश्वास को निकालकर वैज्ञानिक विचारधारा को उनके समक्ष प्रस्तुत कर उनमें

परिवर्तन हेतु कार्यरत है। अत: कहना सही होगा कि आज शिक्षा के प्रचार-प्रसार से समाज में परंपरागत धर्म के प्रति अश्रद्धा तथा अनास्था की भावना प्रबल होती जा रही है क्योंकि वैज्ञानिक युग ने सभी धार्मिक रूढ़ियों, अंधविश्वासों और आडंबरों का पर्दाफाश किया है।

दलित समाज अज्ञान के कारण हर कार्य के पीछे ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते हैं जो एक भयावह समस्या हैं। भारतीय समाज व्यवस्था में देवी-देवतांओं के नाम पर उभरी अंधविश्वास की समस्या आज भी अधिक मात्रा में उभरने लगती है। अज्ञान ही इसके मूल में हैं यह कर्दम जी की धारणा है।

6.6.10 नारी शोषण की समस्या :

प्राचीन काल से भारतीय समाज व्यवस्था में नारी कई समस्याओं से त्रस्त हैं। जिसमें विधवा नारी, दहेज ग्रस्त नारी, पुरुष के आतंक तथा भय से पीड़ित नारी, यौन शोषण से पीड़ित नारी। नारी उत्पीड़न तथा शोषण समस्या के बारे में राम अहुजा का कहना है कि - "भारतीय समाज में महिलाएँ इतने लंबे काल से अपमान, यातना और शोषण का शिकार रही है, जितने काल के हमारे पास सामाजिक संगठन और पारिवारिक जीवन के लिखित प्रमाण उपलब्ध हैं।"[40] दलित नारी इसका अपवाद नहीं रही है। दलित नारी का घर बाहर भयंकर मात्रा में शोषण हो रहा है।

'करुणा' इस लघु उपन्यास में एक दलित मजदूर किसान भुल्लन की बेटी अंगूरी के साथ धामपुर गाँव के ठाकुर सुखदेव सिंह का बेटा सूरज बलात्कार करने की कोशिश करता है। उसके पिता की दलित नारी के बारे में मान्यता है कि "अरे चमार की लड़की छेड़ी है उसने किसी ब्राह्मण या ठाकुर की तो नहीं छेड़ी। इसमें कौन-सा बड़ा अनर्थ हो गया। आखिर कहारिन-चमारिन होती किस लिए हैं।"[41] अत: उक्त उद्धरण इस बात का संकेत है कि समाज व्यवस्था में दलित नारी की कोई हैसियत नहीं।

'छप्पर' उपन्यास की एक दलित नारी 'कमला' यौन शोषण की शिकार बनी है। वह स्वयं अपने जीवन की त्रासदी बयान करते हुए कहती है, "काश! मैं बदसूरत होती तो कम से कम मेरा जीवन तो बर्बाद नहीं होता।"[42] अत: दलित नारी की सुंदरता उसका शारीरिक शोषण बनता है। दलित अछूत नारी का सौंदर्य चुसने के लिए सवर्ण भेडिए तत्पर रहते हैं। सौंदर्य उसके लिए अभिशाप वनता है। प्रेमचंदजी ने भी दलित नारी शोषण पर चिंतन किया है।

6.7 दलित विद्रोह की समस्या :

विद्रोह से तात्पर्य : किसी के प्रति होनेवाला वह द्वेष या आचरण जिससे उसको हानि पहुँचे, राज्य में होनेवाला भारी उपद्रव जो राज्य को हानि पहुँचाने या नष्ट करने के उद्देश्य से हो। क्रांति, बलवा, बगावत है।[43]

समाज में व्याप्त अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार, शोषण मूलत: विद्रोह की भावनाओं को जन्म देते है। अत: विद्रोह मानव मन का एक स्वाभाविक उद्रेक है। आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि अन्याय से त्रस्त व्यक्ति न्याय के लिए विद्रोह करता है। डॉ.बाबासाहब अम्बेड़कर जी के दलितोद्धार मंत्र-शिक्षा, संगठन, संघर्ष की प्रेरणा से भारतीय समाज व्यवस्था में सदियों से शोषित दलित समाज में वैचारिक जागृति होकर वे अपनी अस्मिता की तलाश में विद्रोही वन रहें है। अत: जयप्रकाश कर्दम के विवेच्य उपन्यासों 'करुणा' तथा 'छप्पर' में दलित विद्रोह की समस्या का विवेचन प्रस्तुत करेंगे -

ईश्वर तथा धार्मिक पाखंडता के प्रति विद्रोह की समस्या के दर्शन 'छप्पर' उपन्यास में होते है। 'छप्पर' उपन्यास का नायक चंदन समाज में स्थित अंधविश्वास, धर्म ग्रंथ, पंडित लोग, ईश्वर तथा धार्मिक पाखंड़ता के प्रति विद्रोह व्यक्त करता है। वह इन्हें व्यक्ति के शोषण के हथियार के रूप में देखता है। वह इनपर प्रहार करते हुए ईश्वर तथा धार्मिक पाखंडता के प्रति समाज में जागृति करते हुए कहता है कि "पत्थर के

इन देवी-देवताओं या भगवानों की पूजा-अर्चना करने या उनको भेंट चढ़ाने से कुछ भी होनेवाला नहीं है। इसका कोई औचित्य नही है सिवाय इसके कि इसके सहारे कुछ लोगों की आजीविका चलती है।"[44] यहाँ धर्म पंडित, धर्म पंडितों की पाखंडता तथा ईश्वर के प्रति विद्रोह है। विवेच्य उपन्यासों में भ्रष्ट तथा शोषक समाज व्यवस्था के प्रति भी विद्रोह की भावनाएँ उभर आयी है।

'करुणा' उपन्यास का पात्र रमेश एक शिक्षित युवक है। वह अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार शोषण को जन्म देनेवाली समाज व्यवस्था का निषेध व्यक्त करते हुए कहता है कि - "जहाँ पर आदमी के अधिकारों का इस तरह हनन हो जहाँ एक जवान और अविवाहित व्यक्ति को खस्सी होने को मजबूर होना पड़े। ऐसे समाज और ऐसी व्यवस्था का क्या लाभ।"[45]

दलित शिक्षित युवक रमेश के इस वक्तव्य में विद्रोह की भावना व्यक्त हैं। वह ऐसी भ्रष्ट व्यवस्था को निरर्थक मानता है। पूँजीपतियों तथा सामंतवादियों के प्रति विद्रोह की समस्या विवेच्य दोनों उपन्यासों में उभरी हुई देखने को मिलती है।

'छप्पर' उपन्यास का नायक चंदन एक शिक्षित युवक है। वह समाज में व्याप्त अन्याय, अत्याचार, विषमता को नष्ट करके समतावादी समाज की स्थापना करने का निश्चिय करता है। वह कहता है कि "हमें समाज में टक्कर लेनी है, सत्ता से लड़ाई लड़नी है। जुल्म और शोषण के विरूद्ध संघर्ष करना है।"[46] नायक चंदन भ्रष्ट और शोषण समाज व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह की भावना व्यक्त करता है। 'करुणा' उपन्यास का नायक रमेश भी अन्याय अत्याचार के साथ-साथ भ्रष्ट एवं शोषक समाज व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह करता है।

'छप्पर' उपन्यास का चंदन एक सामाजिक कार्य करनेवाला शिक्षित युवक है। वह पूँजीपतियों तथा सामंतवादियों द्वारा दलितों पर होनेवाले अत्याचारों के खिलाफ विद्रोह करता है। वह शोषण के खिलाफ आवाज उठाता है। वह मातापुर गाँव में गरीब

मजदूर किसान की आर्थिक सहाय्यता के लिए सहकार समिति की स्थापना करता है। जिससे गरीब व्यक्तियों को कम से कम सूद पर आर्थिक मदद प्राप्त हो जाए। इससें गाँव में स्थित पूँजीपतियों, सामंतवादियों तथा साहुकारों के व्यवसाय बंद होते है। इस पर इसका विरोध करनेवालों को वह मुँहतोड़ जवाब देता है।

'करुणा' उपन्यास में भी इसी तरह पूँजीपतियों तथा सामंतवादियों के प्रति विद्रोह के संकेत दृष्टिगोचर हैं - "जेल में एक सामाजिक कार्यकर्ता कैदी बनकर आता है। वह जेल के सभी कैदीयों से कहता है कि "इन पूँजीपतियों की हत्या करो ताकि गरीब कमजोर लोगों को शोषण से मुक्ति मिले। किसी को लूटना ही है तो इन अमीरों की तिजोरियों को लूटो जिनमें लाखों-करोंडा गरीब मजदूरों के खून-पसीने की कमाई भरी पड़ी हैं।"[47]

विवेच्य उपन्यास में सामंतवादी प्रवृत्ति के खिलाफ विद्रोह की भावना उभरी है। स्पष्ट है कि विवेच्य उपन्यासों में पूँजीपतियों तथा तथा सामंतवादियों के प्रति विद्रोह प्रकट हुआ है।

'छप्पर' उपन्यास में लेखक ने दलित नारी विद्रोह का यथार्थ रूप में अंकन किया है। इस उपन्यास में 'कमला एक दलित नारी है। वह प्रस्थापित समाज व्यवस्था के उच्चवर्ग द्वारा वलात्कारित है। वह बलात्कार के पश्चात उत्पन्न वच्चे को पढ़ा-लिखाकर उसपर हुए अत्याचार का प्रतिशोध लेना चाहती है। वह कमला दलित आंदोलन में सहभाग लेकर स्वयं को समर्पित करती है। यहाँ नारी विद्रोह का एक महत्त्वपूर्ण आयाम लेखकने प्रस्तुत करते हुए इस घृणित कार्य के लिए समाज व्यवस्था को जिम्मेदार ठहराया है।

नारी विद्रोह की समस्या जयप्रकाश कर्दम जी ने विद्रोह के अनेक आयाम अपने उपन्यासों चित्रित किये हैं और विद्रोही प्रवृत्ति के पीछे की कारण मिमांसा को स्पष्ट किया है।

जमींदारों के प्रति विद्रोह की समस्या के दर्शन भी यहाँ होते है। जमींदारी प्रथा तत्कालीन मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कानून से सन् 1952 में हटाई फिर भी आज जमींदारों के वंशज इस प्रथा का अनुपालन करते हुए दुर्वलों का शोषण करते है। 'छप्पर' उपन्यास का एक दलित मजदूर किसान सुक्खा सामाजिक शोषण का शिकार हुआ है। वह गाँव के जमींदार ठाकुर हरनाम सिंह के खिलाफ विद्रोही भूमिका लेकर कहता है कि "मैं मर जाऊँगा। भूखा प्राण तज दूँगा। सव कुछ बर्दाश्त करूँगा मैं पर चंदन को इस नर्क में नहीं पड़ने दूँगा। कभी जिस नर्क में मुझे रहना पड़ा है।"[48] दलित चंदन को शिक्षा से रोकने के लिए प्रयत्न करनेवाले ठाकुर हरनामसिंह को वह सुनाता है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि दलित जीवन में व्याप्त शोषण स्वंतंत्रता पूर्व तथा पश्चात भी चला रहा है। इन समस्याओं से घिरे दलित, शोषित, पीड़ित यातनामय जीवन बीताने के लिए मजबूर है। निष्कर्षत: कहना सही होगा कि जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में दलित समाज की सभी समस्याओं का यथार्थ रूप में चित्रण हुआ हैं।

निष्कर्ष :

भाषा में भाव या विचार को अभिव्यक्ति मूलत: शव्द से ही होती है। जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में भाषा के द्वारा दलितों की पीड़ा, अपमान, व्यथा का सही और यथार्थ रूप में अंकन हुआ है। इन्होंने भाषा को परिष्कृत तथा जनसाधारण की भाषा बनाने के लिए विविध स्तरों तथा क्षेत्रों के शव्दों का प्रयोग किया हैं। जैसे - तत्सम, तद्‌भव, देशज, अरवी, फारसी, अंग्रेजी, संस्कृत, ध्वन्यार्थक, निरर्थक, द्विरूक्त, संयुक्त, अपशव्द आदि। अत: भाषा को सौंदर्य प्रदान करने के लिए विविध उपकरणों का प्रयोग किया है -

जैसे - पात्रानुकूल भाषा, उपदेशात्मक भाषा, आत्मकथात्मक भाषा, आक्रमक तथा क्रांतिकारी भाषा, दलित जीवन के लिए प्रेरणादायी भाषा वर्णनात्मक

भाषा, मुहावरों, लोकोक्तियों तथा सुक्तियों आदि का मार्मिक अंकन भी विवेच्य उपन्यासों का भाषा सौंदर्य बढ़ाता है।

विवेच्य उपन्यासों में सशक्त भाषा के अभिव्यक्ति के साथ-साथ इनमें निहित उद्देश्य के पहलुओं पर चिंतन करते हुए कर्दम जी ने इन दो रचनाओं के उद्देश्य को स्पष्ट किया है। इन दो उपन्यासों में दलित जीवन की त्रासदी का, दलित समाज में स्थित व्यसनाधीनता का, पुलिस शोषण का, बढ़ती जनसंख्या का, भूख की पीड़ा का, बाढ़ का, अकाल का, मजदूर शोषण का, सेठ साहुकार जमीदारों द्वारा शोषण का, धार्मिक व्यक्ति द्वारा शोषण का, देवी-देवताओं के प्रति अंधविश्वास का, नारी शोषण का आदि अनेक विषयों पर चिंतन करते हुए लेखक कर्दम जी ने इन विषयों के आधार पर दलित जन-जीवन के विकास के लिए एवं प्रबोधन के लिए अनेक उद्देश्यों पर गहराई से सोचा है। कर्दम जी ने दलित जीवन में स्थित विद्रोह के अनेक पहलुओं को खोजकर रखते हुए विद्रोह के पीछे की मूल संवेदना को खोजने का प्रयास किया है। इन विद्रोह के विविध पहलुओं में ईश्वर तथा धार्मिक पाखंडता के प्रति विद्रोह, भ्रष्ट तथा शोषक समाज व्यवस्था के प्रति विद्रोह, पूँजीपतियों तथा सामंतवादियों के प्रति विद्रोह, नारी विद्रोह, जमींदारों के प्रति विद्रोह आदि पर चिंतन किया है। अत: स्पष्ट है कि भाषा की दृष्टि से कर्दम जी के विवेच्य उपन्यास प्रयोगात्मक लगते हैं। विविध भाषाओं के शब्द, विविध प्रकार की शैलीयों के प्रयोग, मुहावरें-कहावतें, सुक्तियों के प्रयोगों से भाषा प्रौढ, सजग, धारावाही तथा प्रवाहित बनी है। पात्रानुकूल और उपदेशात्मक भाषा के प्रयोगों से भाषा में सजीवता आ गई है। लेखक ने अपने विचारों की अभिव्यक्ति विवेच्य उपन्यासों के उद्देश्यों के द्वारा की है। लेखक चाहता है कि दलितों के जिम्मे आनेवाली उपेक्षा समाज व्यवस्था की देन है। इस व्यवस्था को विद्रोह की अग्नि जनमानस में निर्माण करके निपटारना चाहिए।दलितों की विकास गति को बढ़ाने में आनेवाली समस्याओं एवं टकरावों का निराकरण करना चाहिए। शिक्षा के माध्यम से दलितों में अस्मिता जागृति

करके दलित जीवन में उभरी समस्याओं का निराकरण करना चाहिए। कर्दम जी दलित जीवन में विकास की हवा भरने के लिए कभी अम्बेड़करवादी विचारधारा का तो कभी गांधीवादी विचारधारा का तो कभी मार्क्सवादी विचारधारा का प्रयोग करते है। उनके बीच को लेखक कभी गांधीवादी बनकर सवर्णों के मन में परिवर्तन करना चाहते है। कभी अम्बेड़करवादी बनकर समता, बंधुता, न्याय, स्वतंत्रता का नारा लगाते है। तो कभी मार्क्सवादी बनकर विद्रोह और क्रांति का झंडा हाथ में लेकर दलित जीवन के सामने उभरनेवाली समस्याओं का निराकरण करना चाहते है। यहाँ रक्तहीन क्रांति है। विद्रोह में आक्रमकता नहीं है। अर्थात स्पष्ट है कि विवेच्य उपन्यास भाषा, उद्देश्य तथा समस्या प्रस्तुतीकरण में सफल बनें है।

संदर्भ संकेत :

1.	भोलानाथ तिवारी	-	'भाषा विज्ञान'	पृ.5
2.	श्यामसुंदरदास	-	'साहित्य लोचन'	पृ.231
3.	जगमोहन टण्डन	-	'सरल भाषा विज्ञान'	पृ.12
4.	मुन्शी प्रेमचंद	-	'साहित्य का उदय'	पृ.216
5.	राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी	-	'हिंदी व्याकरण'	पृ.3
6.	वही	-		पृ.3
7.	वही	-		पृ.3
8.	डॉ.हरदेव बाहरी	-	'हिंदी : उद्भव विकास और स्वरूप'	पृ.137
9.	जयप्रकाश कर्दम	-	'करूणा'	पृ.71
10.	जयप्रकाश कर्दम	-	'छप्पर'	पृ.40
11.	जयप्रकाश कर्दम	-	'करूणा'	पृ.49
12.	जयप्रकाश कर्दम	-	'छप्पर'	पृ.41, 42
13.	जयप्रकाश कर्दम	-	'करूणा'	पृ.65
14.	जयप्रकाश कर्दम	-	'छप्पर'	पृ.111
15.	जयप्रकाश कर्दम	-	'करूणा'	पृ.48
16.	जयप्रकाश कर्दम	-	'छप्पर'	पृ.40
17.	जयप्रकाश कर्दम	-	'करूणा'	पृ.69
18.	जयप्रकाश कर्दम	-	'छप्पर'	पृ.35
19.	जयप्रकाश कर्दम	-	'करूणा'	पृ.5
20.	जयप्रकाश कर्दम	-	'छप्पर'	पृ.6, 7

21. अमी आधार निडर - 'समाचार संकलन एवं अनुवाद' पृ.110,111

22. डॉ.अर्जुन चव्हाण - 'अनुवाद ः समस्याए एवं समाधान' पृ.7

23. डॉ क्षितिज धुमाळ - 'बीसवीं सदी के अंतिम दशक के हिंदी उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक अनुशीलन' पृ.351

24. डॉ.देवीप्रसाद गुप्त - 'साहित्य ः सिद्धान्त और समोलोचना' पृ.211

25. उमा गगरानी - 'उपन्यासकार रेणु तथा नागार्जुन के रचना संसार का तुलानात्मक अध्ययन' पृ.109

26. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.13

27. डॉ.कामिनी बाली - 'पर्यावरण और सामाजिक चेतना' पृ.112

28. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.49

29. सं.सरोजनी नाणवटी रवींद्र केलकर काका कालेलकर - 'ग्रंथावली नौंवां खंड' पृ.49

30. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.96

31. वही - पृ.16 17

32. प्रा.फडणीस नारायण आवटे - 'नागार्जुन के उपन्यासों में निम्नवर्ग का चित्रण' पृ.36

33. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.11

34. डॉ.तेजसिंह - 'नागार्जुन का कथा साहित्य' पृ.80

35. जयप्रकाश कर्दम - 'करुणा' पृ.39

36. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.31

37. डॉ.श्रीराम गुंदेकर - 'ग्रामीण साहित्य ः प्रेरणा और प्रयोजन' पृ.94 95

38. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.18

39. वही - पृ. 17

40. राम आहुआ - 'सामाजिक समस्याएँ' पृ.227

41. जयप्रकाश कर्दम - 'करुणा' पृ.29

42. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.50

43. संपा.श्यामसुंदर दास - 'हिंदी शब्द कोश' पृ.4484

44. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.50

45. जयप्रकाश कर्दम - 'करुणा' पृ.65

46. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.40

47. जयप्रकाश कर्दम - 'करुणा' पृ.49

48. जयप्रकाश कर्दम - 'छप्पर' पृ.35